अतिथि संपादक की कलम से.....

गीत एक अनवरत नदी है

मधु शुक्ला

गीत, जो प्रारम्भ से ही साहित्य के केंद्र में रहा है, और आज भी सबसे लोकप्रिय विधा के रूप में विद्यमान है। सवेदनाओ के अतिरेक का बहाव ही कविता है। आदिकाल से कविता की अजस्त्र धारा सवेदना के इसी स्रोत से प्रवाहित होती चली आ रही है, और नित नयी काव्य धाराओं को समाहित करती जा रही है। मानव मन की घनीभूत सवेदनाये जब आलोड़ित होकर शब्दों में प्रस्फुटित होती हैं, तब कविता का रूप धारण कर लेती हैं।
"मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः।यत्क्रौंचमिथुनादेकमवधीः काममोहितम्।।"

सदियों से 'गीत' भावात्मक सवेगों की अनुगूंज बनकर मनुष्य के हृदय को छूता रहा है।भारतीय गीति काव्य की परंपरा विश्व में सबसे पुरातन है, जो वेदों से लेकर आज तक अक्षुण्य रूप से चली आ रही है। आदिकवि वाल्मीकि, कालिदास, जयदेव, और विद्यापति से होते हुई ये सुरसरिता हिन्दी के घाट तक पहुंची, जहां से आदिकाल,भक्तिकाल, रीतिकाल और आधुनिक काल के विभिन्न सोपानों को पार करती हुई छायावाद की घनी शीतल छाँव में हिलोरे भरती हुई कल- कल नांद का मधुर स्वर बिखेरने लगी।

छायावादी कवियों ने गीत की संरचना में क्रातिकारी परिवर्तन किये, जिसमें निराला का विशेष योगदान रहा । निराला में पारम्परिक छन्दों को तोड़कर नये छन्दों को गढ़ने की विशेष दक्षता थी, उनके "नव गति, नवलय,ताल छन्द नव" के आह्वान के साथ ही गीत को नयी दिशा और दृष्टि मिली, गीतकारों में नवता के प्रति रुझान और प्रतिबद्धता का भाव सामने आया, फलतः गीत के कथ्य और शिल्प में धीरे-धीरे परिवर्तन होने लगा, 1935 से 1945 के बीच गोपाल सिंह नेपाली और हरिवंश राय बच्चन ने इसके लिए उर्वर जमीन तैयार की, 1950 के दशक तक आते- आते गीत ने अपना नया धरातल और आसमान तलाश लिया था। गीत के इसी परिवर्तित स्वरुप को डॉ राजेंद्र प्रसाद ने 1958 में नवगीत की संज्ञा से अभिहित किया। जिसे स्वीकृति और गति देने में सबसे बड़ा योगदान था डॉ शंभू नाथ सिंह का। उनकी इस यात्रा में वीरेंद्र मिश्र, उमाकांत मालवीय, देवेन्द्र कुमार, ठाकुर प्रसाद, रवीन्द्र भ्रमर, शिव बहादुर सिंह भदौरिया, रमेश रंजक जैसे अनेकानेक स्वनामधन्य गीत साधक सहयात्री की तरह साथ चल रहे थे।

इन गीत साधकों ने गीत को संरक्षण प्रदान करने के साथ- साथ उसे नवीन शिल्प, भाषा, भाव बिम्बों और प्रतीकों के माध्यम से लोक धर्मी बनाया। बाद में जिसका अनुगमन करते हुए अनेक रचनाकारों ने अपने आंचलिक परिवेश, संस्कारों, व परंपरा के रंगों और भाषा के नवीन प्रयोगों से गीत को समृद्ध किया।

आज नवगीत ने लगभग 8 दशकों की अपनी विकास यात्रा में परिवर्तन और प्रगति के कई सोपान तय कर लिये हैं ।नवगीत की इस विकास धारा को सतत प्रवाहमान और ऊर्ध्वगामी बनाये रखने में पिछली तीन पीढ़ियों ने अपना अमूल्य योगदान दिया। जिसकी श्रंखला में जुड़ती नित नये साधकों की कड़िया अंजलि-अंजलि जल से इस महाधारा को गति मान बनाये हुये हैं। आज देश में नवगीत के अनेक ऐसे हस्ताक्षर हैं, जो

अपनी अप्रतिम प्रतिभा एवं श्रेष्ठ सृजन से इसे नित नयी ऊँचाइयाँ दे रहे हैं, जिसमें चौथी और पाँचवी पीढ़ी के युवा रचनाकार भी नयी ऊर्जा और प्रतिबद्धता के साथ नवगीत में नये आयाम जोड़ रहे हैं।
"गीत एक अनवरत नदी है।
कठुला भर नेकी है, सूप भर बदी है।"

कवि उमाकांत मालवीय जी ये पक्तियाँ गीत की शाश्वता, प्रवाहमयता , निरंतरता, समय सापेक्षता और लोक संपृक्तता को उद्भासित करते हुए गीत की उत्तम परिभाषा प्रस्तुत करती हैं।

गीत की इसी लोक संपृक्तता की गहरी जड़ों कारण ही गीत विरोधी तमाम साजिशों और कोशिशों के बाद भी गीत की सत्ता अक्षुण्य और अप्रतिहत बनी हुई है। उसे नकारने वाले ये भूल जाते हैं, कि जब तक ये सृष्टि हैं, मानव है, मानव मन में पीड़ा और सवेदना जनित गुणों- प्रेम, करुणा आदि भाव हैं, प्रकृति में प्रतिक्षण नूतन सौंदर्य का बहाव है, तब तक गीतों का अस्तित्व विद्यमान रहेगा। गीत की सत्ता न कभी मिटी है, न मिटेगी। गीत मानव जीवन के हर कर्म और भाव में इस तरह समाहित है कि उसे यदि साहित्य से बेदखल भी कर दिया तो भी वह अनंत काल तक लोक मानस यात्रा करता रहेगा। क्योंकि छन्द गीत की संजीवनी शक्ति है, जो उसे कंठ से कंठ की यात्रा के साथ हमारी स्मृतियों में संजोती है। अतः गीत की सबसे बड़ी अनिवार्यता उसकी लयता और उसमें निहित गेयता है। गीतों में शब्दों का विन्यास कुछ इस तरह होता है, जो हमारे मन के तारों में कंपन उत्पन्न करते हुए हमारी स्मृतियों में दर्ज हो जाता है। जिस प्रकार शरीर के बिना आत्मा का कोई अस्तित्व नहीं, उसी प्रकार छन्द के साँचे में ढले बिना भाव भी आधारहीन होता है, और वह चिड़िया के टूटे पंख की तरह थोड़ी देर हवा में तैर कर विलीन हो जाता है। गीत गाने की सहज प्रवृत्ति के कारण ही छन्द के प्रति मानव मात्र का आकर्षण चिरकाल से रहा है।

गीत आत्माभिव्यक्ति का चरम उत्कर्ष है। "गीत" रचना आसान नहीं होती, नैसर्गिक प्रतिभा, व्यापक अध्ययन, गहन अनुभूति और दीर्घकालिक साधना के द्वारा ही उस चरम विंदु तक पहुँचा जा सकता है। जहां भाव शब्दों व लय के साथ स्वयं यात्रा करने लगते हैं। क्योंकि गीत लिखा नहीं जाता, वरन वह घनीभूत अनुभूतियों के प्रबल आवेग से मन के सारे तटबंधों को ढहाता हुआ पहाड़ी झरने की तरह स्वयं प्रस्फुटित होता है। अतः गीत रचना शौक या फैशन नहीं सतत और अनथक साधना है, जो किसी- किसी को ही सिद्ध हो पाती है।

ये प्रसन्न्ता का विषय है कि विगत कई वर्षो से हिंदी भाषा, साहित्य और संस्कृति के संवर्धन हेतु कृत संकल्प "साहित्य रत्न मासिक ई पत्रिका " का जुलाई अंक गीत- नवगीत विशेषांक के रूप में प्रकाशित हो रहा है। देश भर के रचनाकारों की चयनित रचनाओं का ये विशेषांक निश्चित रूप से गीत प्रेमियों के लिए नायाब तोहफे की तरह होगा। यह अंक चर्चित नवगीत कार एवं बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न साहित्यकार श्री मनोज जैन मधुर पर केंद्रित है।
मनोज जैन मधुर उन विशिष्ट रचनाकारों में शुमार हैं, जिन्होंने अपनी शुरुआती रचनाओं से ही नवगीत बिरादरी में अपनी विशिष्ट पहचान और मजबूत जमीन बना ली थी, जिसे नित नयी सृजनात्मक उपलब्धियों के साथ बरकरार रखा। इन दिनों मनोज जी , मध्य प्रदेश साहित्य अकादमी के द्वारा मिले " अखिल भारतीय नारद मुनि सम्मान" के कारण भी विशेष चर्चा में हैं। यह सम्मान उन्हें फेसबुक पर पिछले पाँच वर्षो से चल रहे "वागर्थ" और "अंतरा" साहित्यिक पटल के लिए प्रदान किया गया।

वागर्थ पटल के माध्यम से उन्होंने न केवल रचनाकारों को एक मंच पर एकत्रित कर उनकी रचनाओं को पूरे देश और विदेशों तक प्रचारित- प्रसारित किया, वरन वे साहित्य को वहाँ लेकर गए जहाँ पुस्तकों से छिटक कर आज का पाठक मौजूद है। निश्चित रूप से यह उनके श्रम और साहित्य साधना का सम्मान है। सशक्त नवगीतकार के रूप में लोकप्रियता अर्जित करने वाले मनोज जी की प्रतिभा के अनेक आयाम हैं। उन्होंने गद्य और पद्य की प्रायः सभी विधाओं में लेखन किया है। उनके दो नवगीत संग्रह - "एक बूँद हम" एवं "धूप भरकर मुट्ठियों में" प्रकाशित हो चुके हैं। और कई संग्रह प्रकाशन की प्रक्रिया में हैं। पिछले वर्ष उनके बालगीतों का संग्रह " बच्चे होते फूल से " प्रकाशित हुआ, जिसने बाल साहित्य जगत में खूब सराहना और सम्मान बटोरे, और मनोज जी को बाल साहित्यकार के रूप में स्थापित किया।

प्रत्येक रचना, रचनाकार के व्यक्तित्व का ही प्रतिबिंब होती है, उसके अन्तःकरण में उपस्थित स्मृतियाँ, विभ्रातियां ,कल्पनायें, सवेदनाये, संस्कार, विचार, दृष्टि और जीवन मूल्य ही धूप- छाँव की तरह काया या कलेवर बदल कर प्रकट होते हैं। मनोज जी को मैं जितना पढ़ और समझ पाई हूँ, उस आधार पर कह सकती हूँ, कि उनकी रचनायें उनके व्यक्तित्व का आईना हैं। उनके कृतित्व और व्यक्तित्व में शीशे सी पारदर्शिता है, वे अपनी बात बिना किसी लाग- लपेट के बहुत मुखरता और सहजता से कहते हैं, और यही उनके गीतों की विशेषता है।
मौलिकता, सहज- सरल शब्द विन्यास, सधा हुआ शिल्प, और अभिव्यक्ति का बेबाक अंदाज ही उनके गीतों को अलग से रेखाकित करता है।
इन गीतों की जमीन उनका भोगा हुआ यथार्थ है, जिसमें लोक चेतना, प्रकृति, समाज और जीवन के सारे ताने-बाने समाहित हो जाते हैं। जीवन की बिडम्बनाओ, सच्चाई एवं सम्वेदनाओ से समाज को जोड़ने के लिए मनोज कभी-कभी व्यंग्य का दामन भी थामते हैं। मनोज जैन मधुर के दो लोकप्रिय गीत जो मुझे विशेष रूप से प्रभावित करते हैं, मैं यहाँ उधृत कर रहीं हूँ-
"चाँद सरीखा मैं अपने को घटते देख रहा हूँ।
धीरे-धीरे सौ हिस्सों में बटते देख रहा हूँ। "

एवं-- "काश हम होते नदी के तीर वाले बट
साँझ झरती, सूर्य ढलता,और पाखी लौट आते
पात दल अपने हिलाकर हम रुपहला गीत गाते
झुरमुटो से झाँकते हम, चाँदनी के पट। "

मनोज जी के गीत जीवन के विविध रंगो, और पक्षों से उद्भूत भावनाओं सवेदनाओ की सफल अभिव्यक्ति हैं, जिन्हें उन्होंने सतत साधना की आँच में तपा कर छन्द बद्ध किया हैं।

समय की छन्नी में छने हुए ये गीत जिंदगी के भीतर छिपी जटिलताओं ,विषमताओं, बनावटी रिश्तों, दोगले आचरण और दोहरे चरित्र को बेनकाब करते हैं।

"शिला खंड हैं, मनुज भेस में,
सिर मत टकरा, इनसे अपना।
गिरगिट जैसा रंग बदलते हों जो पल में
चमक उठे कुछ जादू सा जिनके करतल में
टूटेगा ही देखा था क्यों
बंद आँख से तूने सपना।"

मनोज जैन मधुर जी की लेखनी ऐसे ही प्रभावी और प्रतिनिधि गीतों की रचना में सक्रियता के साथ सृजनरत् हैं। वे आकंठ साहित्य में डूबे हुए हैं। मनोज जी के गीतों पर कहने के लिए बहुत कुछ है,परन्तु अभी ये उनके मूल्यांकन का नहीं ,गति का समय है,

अभी तो फ़सल पकी नहीं है, वो अपनी हरीतिमा के साथ लहलहा रही है, नये स्वरों में गुनगुना रही है, अभी खुशबुओ की पातियाँ हवाओं की मुट्ठियों में बंद हैं, अभी समय की धूप मस्तक तक नही चढ़ी हैं।शिखरों के अनेक सोपान अभी शेष हैं। अतः अभी मैं मनोज जी को अपनी शुभकामनाएं प्रेषित करते हुए यह गीत विशेषांक आपके समक्ष प्रस्तुत करती हूँ।

एक आम धारणा है कि अब अच्छे गीत नहीं लिखे जा रहे हैं या बहुत कम लिखे जा रहे हैं, मुझे विश्वास है कि पाठकों का यह भ्रम इस विशेषांक में सम्मिलित रचनाकारो के गीतों को पढ़ने के बाद अवश्य टूटेगा। ये गीत निराश पाठकों के मन में आश्वस्ति का स्वर भरेंगे एवं आज के सम्वेदन हीन समय में भावनामय संसार की रचना करेंगे। इसी उम्मीद के साथ--

डॉ मधु शुक्ला, भोपाल।